जनतंत्र की खोज में

-----लीना मेहेंदळे

बड़ा शोर सुना था जनतंत्र का। मैंने मां से पूछा, यह जनतंत्र क्या होता है? कहानियों में तो राजा हैं, रानी हैं, परियां हैं, दुष्ट राक्षस हैं, बुद्धिमान मंत्री हैं, कहीं कोई शहरयार भी है राजा को कहानियां सुनाने के लिए। लेकिन जनतंत्र कहीं नहीं। उसने कहा, ठहर मैं तुझे दिखाऊँगी कि जनतंत्र क्या चीज है?

उन दिनों चुनावों की बड़ी धूम थी। स्वतंत्रता के बाद देश का दूसरा चुनाव था। माता-पिता मुझे भी साथ ले गए। कतार से गुजरकर हम चुनावी कमरे में पहुंचे। प्रिसाइडिंग अफसर से कहा-छोटी बच्ची है, देश की भावी नागरिक। इसे समझाना जरूरी है कि चुनाव क्या होता है? वे सज्जन भी कोई शिक्षक रहे होंगे। कहा, 'हां ', 'हां ', बेशक । और मुझे खुद चुनाव पत्रिका दिखाई, मतदान का बक्सा दिखाया। मां के साथ गुप्त कक्ष में भी जाने दिया। पर ठप्पा लगाने का समय आया तो मां ने मुझे दिखाने से इनकार कर दिया कि उसने किस उम्मीदवार के निशान पर मोहर लगाई है। कहा कि मतदान गुप्त होता है ताकि हरेक को अपना हक जताने की पूरी सुविधा हो।

क्या ऐसा है कि आज हम जब चुनावों में अपने नेता को चुनते हैं तो उसे पूरी आश्वस्ति से चुनते है? चुनाव का अर्थ-कारण ही लीजिए। प्रसिद्ध गांधीवादी निर्मला देशपांडे ने मुझे एक घटना सुनाई कि १९५२ में देश के प्रिय चुनावों के समय उनकी मां उम्मीदवार थीं। तब उनके दोस्तों ने घर-घर जाकर प्रचार किया था और बगैर एक पैसा खर्च किए उनकी मां ने चुनाव जीता। जीतने के बाद भी उनका कोई प्रचारक यह मांग करने नहीं आया कि हमने आपको जिता दिया है इसलिए आप हमें कोई सरकारी नौकरी या ठेका-परमिट दिलवाइए। लेकिन अब वह जमाना जा चुका है। अब स्वयं चुनाव आयोग का कहना है कि लोकसभा के उम्मीदवार को चुनाव के लिए पंद्रह लाख रूपए तक की रकम खर्चने का हक है। असली खर्च एक करोड़ भी हो जाता है, यह सभी जानते हैं। इसका अर्थ यही हुआ कि हर चुनावी उम्मीदवार यह पैसा एक लागत के रूप में लगाएगा। अगर जीता तो क्या उसे यह लागत वसूल करने का मोह नहीं होगा? और उस लागत का सूद? चुनावी उम्मीदवारों की इन सारी आर्थिक मजबूरियों को समझने के बाद उनके भ्रष्टाचार से पिसने के बावजूद उसके विरूद्ध आक्रोश व्यक्त करने के लिए जनता में हिम्मत कहां से बचेगी? जनता को कहना पड़ता है - भाई कर लेने दो भ्रष्टाचार !

नरसिंह राव जैसे देश के पूर्व प्रधानमंत्री ने अपने राजकीय अनुभव लिखते हुए चुनावों के दौरान होने वाले आर्थिक उत्पातों के बारे में विस्तार से बताया है। एक नेता का किस्सा सुनने में आया कि वह चुनावों से पहले बैंक से नए नोट निकलवाता है जो कि उसके चुनावी क्षेत्र में बांटे जाते हैं- यह कहकर कि यदि मैं जीत गया तो मेरे कार्यालय में यह नोट ले आइए और पांच गुनी रकम ले जाइए। पैसे बांटते समय लेने वाले की मर्जी है कि वह एक निश्चित सीमा तक जितने चाहे पैसे ले सकता है। यह 'इलेक्शन फिक्सिंग ' किसी भी मैच फिक्सिंग या पौल रिगिंग से ज्यादा प्रभावशाली है। इस प्रकार की चुनावी अर्थनीतियों के आगे मेहनत की कमाई जैसी कोई बात क्या मायने रखती है ! पिछले पुणे लोकसभा चुनाव में सिद्धांत की लड़ाई को मजबूत करने के लिए एक चुनावी उम्मीदवार अविनाश धर्माधिकारी ने अपना नामांकन पत्र भरते समय पहले शपथ पत्र दाखिल कर अपनी सांपत्तिक ब्यौरा जनता के सामने रखा और प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवार को चुनौती दी कि वे भी अपनी संपत्ति का ब्यौरा जनता के सामने रखें। इस चुनौती के बावजूद किसी भी प्रतिस्पर्धी उम्मीदवार ने अपना सांपत्तिक ब्यैरा जनता के सामने नहीं रखा।

जमाना था जब उम्मीदवार चुनाव जीतने के लिए बाहुबल का सहारा लेते थे। लाठी, तलवार, बंदूक, रायफल वाले गुंडों को अपनी सेवा में रखते थे। धीरे-धीरे बाहुबल के धनियों ने सोचना शुरू किया कि हम उन्हें जिताने की बजाय खुद क्यों न जीतें ! हमारे पुराणों में कृत्या राक्षसी का चरित्र है। एक बहुत बड़े तपस्वी किसी धर्मपरायण राजा से चिढ़ गए। राजा का विनाश करने के लिए उन्होंने अपने सर की एक जटा खींची और उसे जमीन पर पटकते हुए कुछ मंत्र पढ़े। कहते हैं, मंत्रों में उनकी तपस्या की सारी शक्ति समाई हुई थी। मंत्र पढ़ चुकने के बाद तपस्वी की शक्ति निकल चुकी थी - वे एक सामान्य व्यक्ति की भांति रह गए। हां, जहां जटा पटकी गई वहां से कृत्या नामक एक भयानक राक्षसी का जन्म हुआ जो तपस्वी की आज्ञा-पालन के लिए बाध्य थी। उसने पूछा, मेरे आका, हुकुम? तपस्वी ने राजा की तरफ इशारा किया, 'इसका विनाश करो।' कृत्या राजा पर आक्रमण करने दौड़ी। लेकिन धर्मपरायण राजा के सम्मुख निर्बुद्धि, बाहुबल की एक न चली। अब कृत्या तड़प उठी। उसका निर्माण ही हुआ था बलि लेने के लिए। यदि वह राजा की बलि नहीं ले सकती तो उसे अपने निर्माता की बलि लेनी पड़ेगी। थोड़े समय पहले उसने जिनसे हुक्म पूछा था, उन्हीं पर दौड़ पड़ी। बिचारे तपस्वी की शक्ति समाप्त हो चुकी थी। अब वे किसी उपाय से कृत्या को नहीं रोक सकते थे। अपना अंत दिखाई पड़ा तो भागकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश की शरण में पहुंचे। सबने कृत्या की शक्ति के समक्ष अपनी असमर्थता दिखाई। फिर तपस्वी को आखिरी उपाय सूझा। वे उसी राजा

की शरण में आए। राजा ने उन्हें अभय दिया और घनघोर लड़ाई के बाद कृत्या का विनाश किया।

बड़ी ही आशावादी कहानी है, क्या कहीं हमें भी आशा की किरण दिखती है कि राजनीति में आने वाले अपराधी तत्वों का विनाश इस देश की जनता कर सकेगी?